कनोला गोभी सरसों एवं कनोला राया

डॉ. अनुभूति शर्मा

भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद्, सरसों अनुसंधान निदेशालय, सेवर, भरतपुर, राजस्थान

ऐसा अनुमान है कि आने वाले वर्षों में खाद्य तेलों के आयात में कई बाधाएं आ सकती हैं जिससे इतनी बड़ी मात्रा में आयात करना न केवल मुश्किल अपितु पहले से अधिक महंगा हो सकता है। विश्वभर में खाद्य तेलों के जैविक ऊर्जा के लिये प्रयोग से इनकी उपलब्धता एवं कीमत दोनों पर आयात की दृष्टि से विपरीत असर पड़ने की संभावना है। ऐसे में समय की मांग यही है कि देश में ही इनका उत्पादन बढ़ाया जाये जिससे इनके आयात पर निर्भरता को कम किया जा सके तथा बहुमूल्य विदेशी मुद्रा को बचाया जा सके।

ग्रामीण भारत में कृषि व उससे जुड़ी सहायक गतिविधियाँ आजीविका का एक प्रमुख साधन है। जनसंख्या विस्फोट और भोजन की मांग हमेशा साथ–साथ चलते हैं। भारत के सामाजिक–आर्थिक ढांचे में कृषि की महत्ता को इस तथ्य से महसूस किया जा सकता है कि देश कि अधिकांश जनसंख्या की आजीविका कृषि पर निर्भर है। प्रत्येक प्राणी के जीवन के लिए आहार आवश्यक है। आहार या भोजन के तीन उद्देश्य हैं। शरीर को अथवा उसके प्रत्येक अंग को क्रिया करने की शक्ति देना, दैनिक क्रियाओं में उतकों के टुटने फूटने से नष्ट होने वाली कोशिकाओं का पुर्नर्निमार्ण और शरीर को रोगों से अपनी रक्षा करने की शक्ति देना। सरसों के बीज (जिसको राई भी कह सकते हैं) पूरे विश्व में उगाये जाते हैं।

राई–सरसों विश्व की एक महत्वपूर्ण तिलहन फसल है क्योंकि इसके बीजों में सिर्फ तेल की अच्छी मात्रा ही नहीं, बल्कि इसकी तेल रहित खली में उच्च दर्जे की प्रोटीन भी अधिक मात्रा में पाई जाती है। यह फसल उश्ण कटिबंध से लेकर शीतोष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों में विश्व के करीब 120 देशों में उगाई जाती है। भारत की अर्थव्यवस्था में राई–सरसों का महत्वपूर्ण स्थान है।

सरसों क्रूसीफेरी ब्रैसीकेसी कुल का द्विबीजपत्री एकक वर्षीय शाक जातीय पौधा है। इसका वैज्ञानिक नाम ब्रेसिका कम्प्रेसटिस है। भारत में मूँगफली के बाद सरसों दूसरी सबसे महत्वपूर्ण तिलहनी फसल है जो मुख्यतया राजस्थान, पंजाब, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल एवं असम में उगायी जाती है। सरसों राजस्थान की प्रमुख तिलहनी फसल है, जिससे तेल प्राप्त होता है। सरसों के तेल में सेचुरेटिड फैटी एसिड़ की मात्रा अन्य खाद्य तेलों से जयादा संतुलित होती है। फलस्वरूप अन्य खाद्य तेलों की अपेक्षा राई सरसों का तेल हमारे स्वास्थय के लिए सर्वोतम है। राई–सरसों में करीब 30–42 प्रतिशत तेल होता है। सरसों के बीज व पत्तियों में अधिक प्रोटीन, संतुलित विटामिन्स व मिनरल्स की मात्रा होती है जो इन्हे एक ज्यादा उपयोगी खाद्य पदार्थ बनाते हैं तथा सरसों के बीज व पत्तियों को अपने भोजन में शामिल करने से इस भोजन को एक संतुलित भोजन कहा जा सकता है। सरसों की खेती कृषकों के लिए बहुत लोकप्रिय होती जा रही है क्योंकि इससे कम सिंचाई व लागत से अन्य फसलों की अपेक्षा अधिक लाभ प्राप्त हो रहा है। सरसों की कम उत्पादकता के मुख्य कारण उपयुक्त किस्मों का चयन अंसुतलित उर्वरक प्रयोग एवं पादप रोग व कीटों पर्याप्त रोकथाम न करना आदि है।

आधुनिक युग में तकनीकी विकास के साथ जहाँ एक ओर हम तरक्की की राह पर आगे बढ़ते जा रहे हैं वहीं हमारे खान–पान व रहन–सहन में हो रहे परिवर्तनों के कारण हमारा स्वास्थ्य विभिन्न प्रकार की खतरनाक बीमारियों का शिकार होता जा रहा है। इनमें हृदय रोग सबसे महत्त्वपूर्ण है जिसका प्रमुख कारण खाने में सही घी व तेल का प्रयोग न होना है। भारतीय खाने में तेल का प्रयोग एक अति आवश्यक अंग है। तेल के प्रयोग से खाने का स्वाद बढ़ता है। तेल से हमें शक्कर एवं प्रोटीन के मुकाबले दुगुनी मात्रा में उर्जा की प्राप्ती होती है। चर्बी में घुलनशील विटामिन 'ए' और 'डी' भी तेल में विद्यमान होते हैं। इसके अतिरिक्त आवश्यक फैटी

एसिड 'लिनोलिक' और 'लिनोलेनिक' एसिड भी खारे तेल से ही प्राप्त होते हैं जो मानव शरीर में नहीं होते एवं 'खरोस्टाग्लैटिन' उत्पादन के लिए बहुत आवश्यक है। इनकी कमी से हमारी शारीरिक क्षमता पर बहुत बुरा असर पड़ता है। अलग–अलग परीक्षणों से यह अनुमान लगाया गया है कि अति आवश्यक 'फैटी एसिड' बच्चों के दिमाग के सही विकास में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

सरसों के तेल में 60 प्रतिशत मोनोअनसेचुरेटेड फैटी एसिड होता है जिसमें 42 प्रतिशत इरुसिक एसिड और 12 प्रतिशत ओलेक एसिड होता है, इसमें 21 प्रतिशत पोलीअनसेचुरेटेड होता है, जिसमें से 6 प्रतिशत ओमेगा–3 अल्फा–लिनोलेनिक एसिड और 15 प्रतिशत ओमेगा–6 लिनोलेनिक एसिड होता है और 12 प्रतिशत संतृप्त वसा होता है।

पौधों की वृद्धि अवस्था के अनुसार सरसों के समस्त भागों (हरी पत्तियाँ, तना एवं बीजों) का मानव अथवा जानवरों के लिए खाने में उपयोग होता है। तेल व मसाले के साथ–साथ इनकी हरी पत्तियों का सब्जी व सलाद के रूप में उपयोग किया जाता है। हरी सरसों स्वाद में उत्तम और तीखी होने के साथ–साथ अन्य हरी सब्जियों से कहीं अधिक पौष्टिक होती है। हरी सरसों में पाचन को बढ़ाने व शरीर को रोगों से दूर रखने की अदभूत क्षमता है। इनमें ऊर्जा की मात्रा कम व आवश्यक खनिज लवण तथा विटामिन प्रचुर मात्रा में पाये जाते है, जो शरीर को स्वस्थ बनाने व रोगों से सुरक्षा प्रदान करने में अहम भूमिका निभाते हैं। सरसों की हरी पत्तियों में विटामिन ई (टोकोफिरोल), विटामिन सी, कैरीटोनोएड, ग्लूकोसिनोलेट्स, स्टीरोल्स व फीनोलिक्स इत्यदि लाभकारी पोशक तत्वों के कारण पोषण में इनका बहुत अधिक महत्व है। देश के विभिन्न प्रांतो मुख्य रूप से उत्तर भारतीय राज्यों – पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश व राजस्थान में सरसों की हरी पत्तियों का उपयोग साग बनाकर खाने के लिये किया जाता है।

हरी सरसों मे विटामिन व खनिज लवणों की मात्रा फलों, अण्डा व दूध से मिलने वाली मात्रा के लगभग समान ही होती है। इसके पत्तों में पर्याप्त मात्रा में आयरन पाया जाता है। जिसका सेवन रक्ताल्पता से बचाव हेतु अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ताजी पत्तियों में फोलिक एसिड पाया जाता है जो लोहे के साथ मिलकर रक्त निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सरसों की पत्तियों में पाये जाने वाले खनिज लवण जैसे कैल्शियम, लौहा, जिंक, मैग्नीशियम, पोटेशियम तथा मैग्नीज रक्त को शुद्ध करने, पाचप को बढ़ाने व अम्ल–क्षार के संतुलन को बनाने मे बहुत उपयोगी है। इनमें रेशे की

अधिक मात्रा होने से आंतो की सफाई, कब्ज व मधुमेह इत्यादि रोगों से बचाव व कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करने में सहायक होती है। साथ ही इसमें रोग प्रतिरोधक तत्व व फाइटो न्यूट्रीयट पाय जाते है जो कैंसर जैसी बीमारी से सुरक्षा प्रदान करते है। ताजी पत्तियाँ विटामिन 'सी' का भी उत्तम स्त्रोत हैं जो शरीर में रोग–प्रतिरोधक शक्ति को बढ़ाकर संक्रामक बीमारियों से सुरक्षा प्रदान करता है।

सरसों के तेल में आमेगा–3 व ओमेगा–6 फेटी–ऐसिड पाये जाते हैं जो बहुत ही उपयोगी होते है। इसमे पाये जाने वाले ओलिक एसिड में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को कम करने वाला गुण पाया जाता है जो हृदय रोगियों के लिए अत्यन्त लाभकारी होता है।

खाने हेतु सही तेल का चुनाव व इस्तेमाल हृदय सम्बंधित बीमारियों से बचने में अहम् भूमिका अदा कर सकता है। आजकल बाजार में तरह–तरह के तेल उपलब्ध हैं परंमु सही तेल का चुनाव करने के लिए हमें प्रत्येक तेल में उपस्थित फैटी एसिड की प्रतिशत मात्रा का संपूर्ण ज्ञान होना बहुत जरूरी है। खाये जाने वाले प्रमुख वनस्पति तेलों में कुछ ज्यादा प्रचलित व अधिक प्रयोग होने वाले तेलों में निम्नलिखित 'फैटी एसिड' मौजूद होते हैं। ये सभी एसिड मिलकर तेल का निर्माण करते हैं।

तालिका–1 विभिन्न वनस्पति तेलों में फैटी एसिड की प्रतिशत मात्रा

वनस्पति तेल	साईट्रिक	पॉमटिक	स्टीरिक	ऑलिक	लिनोलिक	लिनोलिनिक	ईरूसिक
ताड़	–	45	4	40	10	–	–
मूँगफली	–	11	2	48	32	–	–
मक्की	–	11	2	28	58	1	–
बिनौला	–	22	3	19	54	1	–
सूरजमुखी	–	7	5	19	68	1	–
सोयाबीन	–	11	4	24	54	7	–
तिल	–	9	4	41	45	–	–
सरसों	–	3	1–5	10	18	12	50
कनोला	–	4	2	62	22	10	2–5
जैतून	–	13	3	71	10	1	–

छाया चित्र, पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना

किसी भी तेल की गुणवत्ता उसके अन्दर उपस्थित 'सैचुरेटेड' एवं 'अनसैचुरेटेड' फैटी एसिड की मात्रा व उसकी किस्म पर निर्भर करती है। पॉमटिक और स्टीरिक सैचुरेटेड फैटीएसिड होते हैं। ताड़, मक्की, बिनौला, सोयाबीन और जैतून का तेल जोकि खाने में सबसे अच्छे व स्वास्थ्यबर्घक माने जाते हैं, इनमें 'सैचुरेटेड' फैटी एसिड की मात्रा काफी अधिक होती है। अंतरा ट्रीय पैमाने के अनुसार यह सात प्रतिशत (7:) से कम होनी चाहिए। इनमें से कुछ तेलों (मूँगफली, मक्की, बिनौला, सूरजमुखी, सोयाबीन व तिल) में लिनोलिक एसिड (अनसैचुरेटेड फैटी एसिड) की मात्रा भी काफी अधिक है। इस कारण इन तेलों को अधिक तापमान पर बार–बार तलने के लिए प्रयोग करने पर हानिकारक तत्व (ट्रांस फैटी एसिड) पैदा हो जाते हैं जो हमारे ारीर की कोशिकाओं पर बहुत बुरा असर डालते हैं।

वनस्पति तेलों में ट्रांस फैटी एसिड की मात्रा 'हाइड्रोजिनेशन' के कारण ज्यादा होती है। इनके कारण हमारे ारीर में हानिकारक 'कोलेस्ट्रोल' एवं 'ट्राईग्लिसराइड' की मात्रा बढ़ जाती है व लाभदायक 'कोलेस्ट्रोल' इनके अनुपात में कम हो जाता है। परिणामस्वरूप उच्च रक्तचाप, हृदय रोग व मधुमेह जैसी बीमारियों को और अधिक खतरनाक बना देते हैं। 'ट्रांस फैटी एसिड' दिमाग की कोशिकाओं, झिल्ली और नसों की झिल्ली में संयुक्त होकर दिमाग की कार्यक्षमता को भी प्रभावित करते हैं। इनके कारण नसों की संचार क्षमता में परिवर्तन आ जाते हैं। नसों के खराब होने के कारण मश्तिक की क्रियाशीलता कम हो जाती है एवं 'पार्किंसन' जैसी बीमारियों को न्यौता मिलता है।

सरसों के तेल में 'इरूसिल एसिड' की कुल मात्रा पचास प्रतिशत (50:) तक होती है जिसके कारण सरसों के तेल का बहुत ज्यादा प्रयोग, वैज्ञानिकों के अनुसार, दिल की

बीमारी का एक कारण बन सकता है क्योंकि यह हमारी रक्त धमनियों में जम सकता है। जिससे दिल को रक्त बहाव में कमी आ जाती है जो कि 'एंजाईना' को जन्म देता है। इसीलिए अंतरा ट्रीय स्तर पर सरसों की नई 'कनोला' किस्में प्रचलित हैं। 'कनोला' सरसों उस किस्म को कहा जाता है जिसमें 'इरूसिक एसिड' की मात्रा दो प्रतिश्त (2%) से कम तथा एक ग्राम तेल रहित खाल में 'ग्लूकोसिनोलेट' तीस माइक्रोमोल से कम होती है।

जैस कि डी.आर.एम.आर. भरतपुर कुछ उच्च गुणवक्ता वाली किस्में जैसकि बी.आर.क्यू–2–1–5, बी.आर.क्यू–2–1–11 इत्यादि पर अनुसंधान कर रहा है जिसमें इरूसिक एसिड व ग्लूकोसिकोलेट कम मात्रा पाया जाता है। इसी तरह से पंजाब कृषि विश्वविद्यालय ने गोभी सरसों की दो 'कनोला' किस्मों जी.एस.सी–5, जी.एस.सी.–6 और आर.एल.सी.–1 (रायी सरसों) का विकास किया है जिनमें इरूसिक एसिड की मात्रा दो प्रतिशत से कम है। जहां एक ओर 'ग्लूकोसिनोलेट' की मात्रा कम होने के कारण कनोला तेल में कड़वापन कम है वहीं दूसरी ओर तलने के बाद यह तेल जल्दी खराब नहीं होता क्योंकि इसमें 'ऑलिक एसिड' की मात्रा 62 प्रतिशत है जोकि काफी अधिक है। यह हानिकारक 'कोलेस्ट्रोल' पर कोई असर नहीं करता। इसके अतिरिक्त वैज्ञानिक परीक्षणों से यह ज्ञात हुआ है कि 'ऑलिक' एसिड वक्ष–कैंसर को भी कम करने में मददगार है।

लोगों ने इस तेल को बहुत पसंद किया है और 'कनोला' तेल साधारण सरसों के तेल के मुकाबले बुत स्वाथ्यवर्धक है। इस का स्वाद आम तेलों से अच्छा है, सरसों के तेल से ज्यादा टिकाऊ है और जल्दी खराब नहीं होता है। उपरोक्त गुणों को ध्यान में रखते हुए जरूरी है कि 'कनोला' किस्मों को ज्यादा से ज्यादा पैदा किया जाए ताकि जनसाधारण को खाने हेतु स्वाद और सेहतमंद तेल मिले जो कि वह स्वयं अपने खेतों में पैदा कर सकता है।

तेल निकालने के पश्चात् इसके बीजों की 'खल' (तेल निकालने के बाद बचे बीज के अवशेष) का उपयोग प्रोटीन युक्त (35–40%) आहार के रूप में पशुओं एवं पक्षियों के लिए किया जाता है। शोधकर्ताओं ने इस तथ्य को उगाजर किया है कि सरसों की परम्परागत किस्मों के तेल में 'ईरूसिक ऐसिड' की मात्रा अधिक (40–50%) होती है। जिस कारण ऐसे तेल के लगातार सेवन से इनके शरीर की धमनियों में जम जाने के कारण रक्त प्रवाह के प्रभावित होने से दिल के रोगों के आसार बढ़ जाते है।

उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुये 'ईरूसिक ऐसिड' व 'ग्लूकोसिनोलेट्स' रहित सरसों की प्रजातियों/किस्मों को विकसित किया है जिन्हें विश्वभर में कनोला किस्मों के नाम से जाना जाता है। अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर 'कनोला किस्म' सरसों की उस किस्म को कहा जाता है जिसके तेल में ईरूसिक ऐसिड की मात्रा 2% से कम तथा खल में ग्लूकोसिनोलेट्स ऐसा अनुमान है कि आने वाले वर्षों में खाद्य तेलों के आयात में कई बाधाएं आ सकती हैं जिससे इतनी बड़ी मात्रा में आयात करना न केवल मुश्किल अपितु पहले से अधिक महंगा हो सकता है।

पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना ने कनोला गोभी सरसों की किस्में – जी एस सी 7 तथा जी एस सी 6 एवं कनोला राया की किस्म आर एल सी 3 विकसित की हैं। देश में कनोला सरसों के उत्पादन एवं उपयोग की अपार सम्भावनायें है तथा इनकी काश्त के ढंग परम्परागत सरसों के उत्पादन की तरह ही है। अतः समय की मांग है कि इनकी काश्त के लिए अनुमोदित उन्नत तकनीक अपनाकर देश में इस अति गुणकारी तेल व खल का उत्पादन बढ़ाया जाए।

सस्य क्रियाएं :

जमीन एवं खेत की तैयारी :

रेतीली बलुई (मैराद्ध एवं बलुई–दोमह मृदा) कनोला सरसों की खेती के लिये सर्वथा उपयुक्त है। ऊसर/कल्लर या अधिक पी.एच. (8 से अधिक) मान वाली जमीनों में सरसों की खेती न करें। खेत समतल हो तथा इसमें से अतिरिक्त पानी के निकास का उचित प्रबन्ध होना चाहिये। क्योंकि सरसों का बीज आकार में बहुत छोटा होता है, इसके आशातीत, सुगम व एकसार अकुंरण के लिये खेत को अच्छी तरह से महीन व भुरभुरा तैयार करें। खेती की मिट्टी के प्रकार (हल्की/बलुई/मैरा/दोमह), पिछली फसल के अवशेषों एवं पिछली फसल में खरपतवार की संख्या को ध्यान में रखते हुये 2–4 जुताइयां करके सरसों की फसल के अनुरूप खेत तैयार किया जा सकता है। खेत की तैयारी का काम कल्टीवेटर या तवे वाले हल (डिस्क हैरो) की सहायता से बखूबी किया जा सकता है। खेत की बढ़िया तैयारी के लिये प्रत्येक जुताई के बाद पाटा (सुहागा) लगायें। बुवाई का उचित समयः कनोला गोभी सरसों (जी एस सी 7, जी एस सी 6) की बुआई अक्तूबर के दूसरे सप्ताह से प्रारम्भ की जा सकती है जब औसत तापमान 21–25 सैंटीग्रेड हो। अच्छी पैदावार के लिये कनोला गोभी सरसों की बुवाई अक्टूबर माह में ही पूरी कर लेनी चाहिए। कनोला राया (आर एल सी 3) की बुआई का उचित समय 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर तक है। समय से बोई गई फसल न केवल दिसम्बर–जनवरी में पड़ने वाले पाले से बची रहती है, अपितु इस पर बीमारियो (झुलस रोग, सफेद कुंगी) एवं कीटों (विशेषकर चेपा) के हमले की संभावना

भी कम ही रहती है। यदि औसत तापमान 27 डिग्री सैंटीग्रेड से अधिक हो तो उचित तापमान होने पर ही बुआई करनी चाहिए। इसी प्रकार सिफारिश किये गये समय से पहले ही यदि उचित तापमान हो तो बुआई पहले भी की जा सकती है।

बुआई का ढंग :

कनोला गोभी सरसों के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 सैंटीमीटर तथा कनोला राया के लिए 30 सैंटीमीटर रखें। इन फसलों की बुआई मशीन (सीड ड्रील) या पौरा विधि द्वारा हल से की जा सकती है। बुआई के समय खेत में पर्याप्त नमी सुनिश्चित करें। बीज की गहराई 4–5 सैंटीमीटर से अधिक नहीं होनी चाहियें। बुआई के लगभग तीन सप्ताह पश्चात् (बीज अकुंरण के लगभग दो–अढ़ाई सप्ताह बाद) पौधे से पौधे की दूरी 10–12 सैंटीमीटर रखते हुये फालतू पौधे खेत से निकाल दें ताकि प्रत्येक पंक्ति में पौधे एक दूसरे से समान दूरी पर हों। प्रायः यह देखने में आया है कि किसान इस क्रिया को अधिक महत्व नहीं देते या सिफारिश की गई बीज की मात्रा से काफी कम मात्रा में बीज का प्रयोग करते है जिससे खेत में पौधों की संख्या कम रहने से खाली स्थान में खरपतवार पनपते हैं तथा पैदावार पर विपरीत असर पड़ता है।यदि कनोला गोभी सरसों की बुआई समय पर न की जा सके तो नवम्बर में बुआई करते समय पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 सैंटीमीटर से घटा कर 30 सैंटीमीटर कर दें ताकि पौधों की संख्या बढ़ने से देरी से बीजाई से होने वाले नुकसान की भरपाई की जा सके। इसके अतिरिक्त बीजाई में बिलम्ब (नवम्बर–दिसम्बर) होने की स्थिति में कनोला गोभी सरसों की फसल की पहले से तैयार पौध लगाकर अच्छी पैदावार प्राप्त की जा सकती है। इसके लिए 30–35 दिन की पौध की रोपाई सीधी बीजाई के लिये बताये गये ढंग से करें अर्थात् पंक्तियों की बीच की दूरी 45 सैंटीमीटर तथा प्रत्येक पंक्ति में पौधे से पौधे की दूरी 10 सैंटीमीटर रखें। इस विधि द्वारा अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिये पौधों की रोपाई यथासम्भव शीघ्र अति शीघ्र करें। नवम्बर में रोपाई करके दिसम्बर में की गई रोपाई से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। पौधों की रोपाई गेहूं की बिजाई के लिये प्रयोग किये जाने वाले बैड प्लांटर की सहायता से बनाये गये 'बैड' के ऊपर भी की जा सकती है। इसके लिये प्रत्येक 'बैड' के ऊपर कनोला गोभी सरसों की दो पंक्तियां लगायें तथा पौधें से पोधे के बीच 10 सैंटीमीटर की दूरी रखें। 'बैड' के ऊपर रोपाई करने से समतल भूमि पर रोपाई द्वारा विकसित फसल की तुलना के 10–15 अधिक पैदावार के साथ–साथ लगभग 20–25 सिंचाई के पानी की भी बचत होती है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि सरसों के बीज में अधिक प्रोटीन, संतुलित विटामिन्स व मिनरल्स की मात्रा होती है जो इन्हे एक ज्यादा उपयोगी खाद्य पदार्थ बनाते हैं तथा सरसों के बीज व पत्तियों को अपने भोजन में शामिल करने से इस भोजन को एक संतुलित भोजन कहा जा सकता है। अब सरसों का तेल पांरम्परिक और प्रयोगात्मक ज्ञान द्वारा ही नहीं बल्कि इसके लाभकारी गुणों के लिए वैज्ञानिकों के द्वारा भी समर्थित है।